हंसा वाडेकर
रंगमंच व मराठी फ़िल्म अभिनेत्री

नगमा जावेद मालिक

हज़ारों साल नर्गिस अपनी बेनूरी पे रोती है...
बड़ी मुश्किल से होता है चमन में कोई दीदावर पैदा।

संत सखू फ़िल्म से

महाराष्ट्र की धरती कलाकारों के लिए बेहद उर्वर है। लता मंगेशकर, आशा भोंसले, स्मिता पाटिल आदि नामी कलाकारों ने इसी धरती पर जन्म लिया है। हंसा वाडेकर का नाम भी किसी परिचय का मोहताज नहीं है। वह भारतीय सिनेमा की एक कदआवर हस्ती हैं। वह कलाकार ही नहीं थीं एक कलमकार भी थीं। उनके द्वारा लिखी गयी आत्मकथा इसका सशक्त प्रमाण है। हंसा का जन्म 24 जनवरी 1923 को मुंबई में हुआ था, असली नाम था रत्न भालचंद्र सलगांवकर। साथ ही नृत्य और संगीत तो उन्हें विरासत में मिला था, अंग्रेज़ी की शिक्षा भी वाडेकर ने हासिल की। 'विजयाची लग्ने' उनकी पहली मराठी फ़िल्म थी जो ललित कला दर्शन ने बनाई थी। वाडेकर की उम्र उस समय केवल 13 वर्ष की थी।

'मैं बोलती हूं तुम सुनो' (सांगत्ये ऐका) हंसा वाडेकर द्वारा 1970 में लिखी गई आत्मकथा— फ़िल्म है जिसने पूरे महाराष्ट्र में जागरूकता और हलचल पैदा कर दी। इस फ़िल्म के कथा लेखक और नाटककार मामा वरेरकर थे जिन्होंने रत्न का नाम बदलकर उसे फ़िल्मी नाम हंसा दिया था। यही हंसा नाम हमेशा के लिए उनकी पहचान बन गया। 1941 में प्रभात फ़िल्म पुणे में वह 'संत सखू' फ़िल्म में काम करने के लिए आईं। यह फ़िल्म बॉक्स ऑफिस पर हिट हुई। उन्हें नाम और शोहरत मिली। इसके बाद उन्होंने 'रामशास्त्री' व 'लोकशाहिर' फ़िल्मों में काम किया जो अत्यंत प्रसिद्ध हुई।

1948 में हंसा ने केवल एक ही हिंदी फिल्म 'धन्यवाद' में काम किया जिसके निर्देशक गजानंद जागीरदार थे। 1955 में 'मैं तुलसी तुझा अंगणी' में उन्होंने काम किया, इसके निर्देशक राजा ठाकुर थे। 'नयाकनिचा सज्ज्या' 1957 में भालजी पेंढारकर के निर्देशन में बनी फ़िल्म एक बेहतरीन फ़िल्म थी। इन सभी फ़िल्मों में हंसा के मंझे अभिनय को बहुत सराहा गया। 'सांगत्ये ऐका' 1959 में रिलीज हुई। 131 सप्ताह तक विजयानंद टाक़ीज पुणे में लगी रही। यह उस समय का एक ज़बरदस्त रिकार्ड था। 1968 में हंसा को 'धर्मकन्या' के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 'पुडचा पौऊल' (अगला कदम) उनकी अगली फ़िल्म 1970 में राजा परांजपे के निर्देशन में बनी।

15 वर्ष की छोटी उम्र में हंसा का विवाह उनके एक रिश्तेदार भण्डारकर से हुआ। अपनी निजी ज़िन्दगी में उन्हें बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यहां तक कि समाज में सम्मानित कहलाने वाले लोगों ने शादी के बंधन के बावजूद उनसे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित किए। इन सारी सच्चाइयों का वर्णन उन्होंने अपनी आत्मकथा 'मैं कहती हूं, तुम सुनो' में किया है। जाने-माने निर्देशक वी. शांताराम ने भी हंसा की ज़िन्दगी पर एक फ़िल्म बनाई। श्याम बेनेगल की फ़िल्म 'भूमिका' अभिनेत्री हंसा के जीवन पर आधारित एक प्रभावशाली कहानी है। हंसा का किरदार निभाया है प्रसिद्ध अदाकार स्मिता पाटिल ने। फ़िल्म की कहानी हंसा के जीवन की कड़वी सच्चाई को मार्मिकता से दर्शकों के सामने रखती है। कहानी कुछ इस प्रकार है— उषा एक

मशहूर गायिका की नाती है जिसका सम्बन्ध परम्परागत देवदासी समुदाय से है। उषा की शादी एक शराबी और क्रूर ब्राह्मण से हुई है। पति के देहांत के बाद अपनी मां के विरोध के बावजूद इस परिवार के प्रति सदभावना रखने वाला केशव दलवी (अमोल पालेकर) उसे बम्बई ले जाता है। बम्बई स्टूडियो में ऑडिशन में वह गायिका के रूप में चुन ली जाती है। इस पर उसको प्यार करने वाली नानी का समर्थन तो मिलता है पर उसे मां फटकारती है। धीरे-धीरे एक बाल कलाकार के रूप में वह प्रसिद्ध हो जाती है।

हंसा अपनी ज़िद के चलते केशव के साथ प्रेम विवाह कर लेती है। केशव आयु में उससे बड़ा है और अनाकर्षक भी है लेकिन बचपन से ही हंसा उससे प्रभावित है। दूसरे वह अपनी अभिनय कला से भी आनंदित होती है। मां इस शादी का विरोध करती है क्योंकि केशव उनकी जाति का नहीं है। वह सिनेमा में काम के भी ख़िलाफ़ है क्योंकि यह उसकी नज़र में सम्मानजनक काम नहीं है। उषा की शादी के बाद भी केशव उसे काम करने को मजबूर करता है जबकि उषा 'हाउस वाइफ़' बनकर रहना चाहती है। वह एक मशहूर कलाकार राजन को हीरो बनाता है जो हंसा से एक तरफा प्रेम करता है। कुछ समय बीतता है और केशव का बिजनेस खराब हो जाता है। घरखर्च का बोझ उषा पर आ पड़ता है जो केशव को नागवार गुज़रता है। केशव का अहम उसे एक ईर्ष्यालू और लालची पति बना देता है। इसी दौरान उनके यहां एक बेटी का जन्म होता है। शक़ में गिरफ्तार केशव उषा की ज़िन्दगी को नरक बना देता है। उसे मारता-पीटता है और मानसिक रूप से शर्मनाक हद तक प्रताड़ित करता है।

टूटी हुई और निराश उषा के असन्तोषजनक सम्बन्ध दो पुरुषों के साथ बनते हैं। एक है स्वार्थी और दुष्ट निर्देशक सुनील वर्मा (नसीरुद्दीन शाह) और दूसरा अमीर व्यापारी सुनील काले (अमरीश पुरी)। थोड़े समय के लिए ही सही उसे काले की दूसरी पत्नी की हैसियत से आदर मिलता है। काले उसे एक भव्य कोठी में रखता है। यहां काले की मां, बेटा और बिस्तर से लगी उसकी पहली पत्नी से भी उसे प्यार और प्रशंसा मिलती है। लेकिन एक दिन जब वह काले के बेटे को एक नज़दीक लगे मेले में ले जाना चाहती है तो काले का दोगला चेहरा उसके सामने आ जाता है। उसे एहसास होता है कि इस घर में ज़रा-सी भी बुनियादी आज़ादी हासिल नहीं है। वह लड़के को उसके साथ जाने से रोक कर असह्य घरेलू बंधनों और अपनी गिरी हुई मानसिकता का परिचय देता है।

काले की पत्नी के शब्द भी उषा को कचोट देते हैं— 'बिस्तर बदल सकते हैं, रसोईघर बदल सकते हैं, आदमियों के मुखौटे बदल सकते हैं लेकिन आदमी नहीं बदलता।' इस स्थिति में उसे उम्मीद की किरन के रूप में उषा को एक बार फिर केशव याद आता है।

केशव उसे किसी अलंकार के रूप में सही समय पर फिर से मुंबई लाता है। और एक बार दोबारा उषा काम और अभिनय की राह पर चल पड़ती है। इस फ़िल्म का यह अंत दुःखद और धुंधला है। मराठी सिने जगत की यह महान नायिका भी एक संघर्षरत और नाखुश जीवन जीते-जीते इसी तरह 23 अगस्त 1971 को केवल 47 वर्ष की छोटी आयु में इस दुनिया से रुखसत हो गईं। अपने पीछे छोड़ गई वह एक महान कला का खज़ाना जो उनके हुनर और लगन का प्रतीक है।

संत सखू फ़िल्म में हंसा वाडेकर

नगमा जावेद मालिक, *मुंबई में हिन्दी साहित्य की प्रोफ़ेसर हैं।*